

ममता

जयशंकर प्रसाद

ममता

ममता

जयशंकर प्रसाद

आमोद पुस्तक सदन
दिल्ली - 110 092

मूल्य:रुपये 20

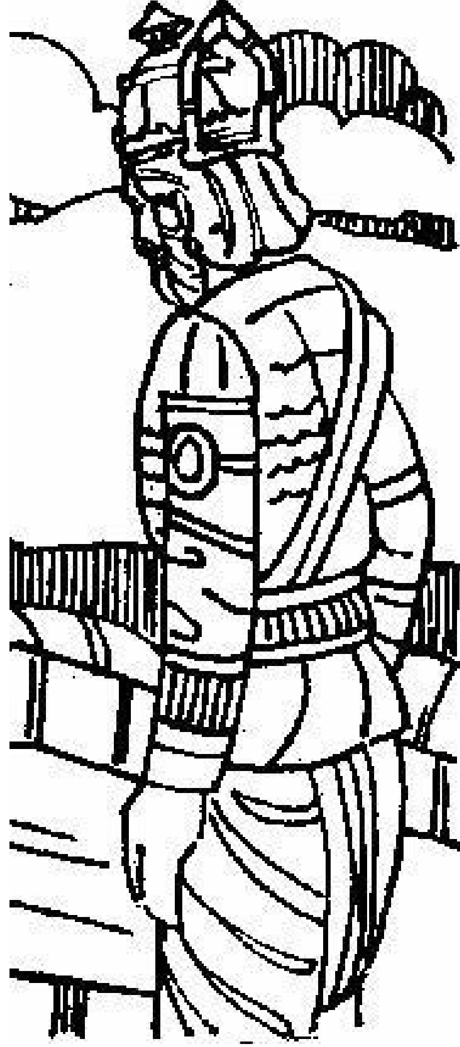
संस्करण :*2013*
प्रकाशक: आमोद पुस्तक सदन
एच-604, फ्रेंड्स अपार्टमेंट
प्लाट नं. 49, पटपड़गंज, आई. पी. एक्स
दिल्ली-110 092
मुद्रक:बी.वे . ऑफसेट
नवीन शाहदरा, दिल्ली - 110 032

MAMTAA (Short Stories) by Jaishankar Prasad

ममता

रोहतास यदुर्ग के प्रकोष्ठ में बैठी हुई युवती ममता, शोण के तीक्ष्ण गम्भीर प्रवाह को देख रही है। ममता विधवा थी। उसका यौवन शोण के समान ही उमड़ रहा था। मन में वेदना, मस्तक में आँधी, आँखों में पानी की बरसात लिए, वह सुख के कंटक यशयन में विकल थी। वह रोहतास यदुर्गपति के मंत्री चूड़ामणि की अकेली दुहिता थी, फिर उसके लिए कुछ अभाव होना असम्भव था, परन्तु वह विधवा थी-हिन्दू विधवा संसार में सबसे तुच्छ निराश्रय प्राणी है-तब उसकी विडंबना का कहाँ अंत था ?

चूड़ामणि ने चुपचाप उसके प्रकोष्ठ में प्रवेश किया। शोण के प्रवाह में, उसके कल यनाद में, अपना जीवन मिलाने में वह बेसुध थी। पिता का आना न जान सकी। चूड़ामणि व्यथित हो उठे। स्नेह यपालिता पुत्री के लिए क्या करें, यह स्थिर न कर सकते थे। लौटकर बाहर चले गए। ऐसा प्रायः होता, पर आज मंत्री के मन में बड़ी दुश्चिंता थी। पैर सीधे न पड़ते थे।



एक पहर बीत जाने पर वे फिर ममता के पास आए। उस समय उनके पीछे दस सेवक चाँदी के बड़े थालों में कुछ लिए हुए खड़े थे; कितने ही मनुष्यों के पद - शब्द सुन ममता ने घूमकर देखा। मंत्री ने सब थालों को रखने का संकेत किया। अनुचर थाल रखकर चले गए।

ममता ने पूछा-''यह क्या है, पिताजी ?''

''तेरे लिए बेटी ! उपहार है।''-कहकर चूड़ामणि ने उसका आवरण उलट दिया। स्वर्ण का पीलापन उस सुनहली संध्या में विकीर्ण होने लगा। ममता चैंक उठी

''इतना स्वर्ण ! यह कहाँ से आया ?''

''चुप रहो ममता, यह तुम्हारे लिए है !''

''तो क्या आपने म्लेच्छ का उत्कोच स्वीकार कर लिया ? पिताजी यह अनर्थ है, अर्थ

नहीं। लौटा दीजिए। पिताजी ! हम लोग ब्राह्मण हैं, इतना सोना लेकर क्या करेंगे ?''

''इस पतनोन्मुख प्राचीन सामंत यवंश का अंत समीप



है, बेटी ? किसी भी दिन शेरशाह रोहिताश्व पर अधिकार कर सकता है; उस दिन मंत्रित्व न रहेगा, तब के लिए बेटी !''

''हे भगवान ! तब के लिए ! विपद के लिए ! इतना आयोजन ! परम पिता की इच्छा के विरुद्ध इतना साहस ! पिताजी, क्या भीख न मिलेगी ? क्या कोई हिन्दू भू -पृष्ठ पर न बचा रह जाएगा, जो ब्राह्मण को दो मुट्ठी अन्न दे सके ? यह असम्भव है। फेर दीजिए पिताजी, मैं काँप रही हूँ-इसकी चमक आँखों को अन्धा बना रही है।''

''मूर्ख है''कहकर चूड़ामणि चले गए।

दूसरे दिन जब डोलियों का ताँता भीतर आ रहा था, ब्राह्मण यमंत्री चूड़ामणि का हृदय धक् यधक् करने लगा। वह अपने को रोक न सका। उसने जाकर रोहिताश्व यदुर्ग के तोरण पर डोलियों का आवरण खुलवाना चाहा। पठानों ने कहा

''यह महिलाओं का अपमान करना है।''

बात बन गई। तलवारें खिचीं, ब्राह्मण वहीं मारा



गया और राजा यरानी और कोष सब छली शेरशाह के हाथ पड़े; निकल गई ममता। डोली में भरे हुए पठान सैनिक दुर्ग भर में फैल गए, पर ममता न मिली। काशी के उत्तर धर्मचक्र विहार, मौर्य और गुप्त सम्राटों की कीर्ति का खंडहर था। भग्न चूड़ा, तृण - गुल्मों से यके हुए प्राचीर, ईंटों की येर में बिखरी हुई भारतीय शिल्प की विभूति, ग्रीष्म की चंद्रिका में अपने को शीतल कर रही थी।

जहाँ पंचवर्गीय भिक्षु गौतम का उपदेश ग्रहण करने के लिए पहले मिले थे, उसी स्तूप के भग्नावशेष की मलिन छाया में एक योपड़ी के दीपालोक में एक स्त्री पाठ कर रही थी-

“अनन्याश्चिंतयंतो मां ये जनाः पर्युपासते...”

पाठ रुक गया। एक भीषण और हताश आकृति दीप के मंद प्रकाश में सामने खड़ी थी। स्त्री उठी, उसने कपाट बन्द करना चाहा। परन्तु उस व्यक्ति ने कहा- “माता ! मु ये आश्रय चाहिए।”

“तुम कौन हो ?”-स्त्री ने पूछा।

“मैं मुगल हूँ। चैसा - युद्ध में शेरशाह से विपन्न होकर रक्षा चाहता हूँ। इस रात अब आगे चलने में



असमर्थ हूँ।”

“क्या शेरशाह से ?”-स्त्री ने अपने होंठ काट लिए।

“हाँ माता !”

“परन्तु तुम भी वैसे ही क्रूर हो, वही भीषण रक्त की प्यास, वही निष्ठुर प्रतिबिम्ब, तुम्हारे मुख पर भी है ! सैनिक ! मेरी कुटी में स्थान नहीं। जाओ, कहीं दूसरा आश्रय खोज लो !”

“गला सूख रहा है, साथी छूट गए हैं, अश्व गिर पड़ा है-इतना थका हुआ हूँ-इतना !”-

कहते यकहते वह व्यक्ति धम यसे बैठ गया और उसके सामने ब्रह्माण्ड घूमने लगा। स्त्री ने सोचा, यह विपत्ति कहाँ से आई ! उसने जल दिया, मुगल के प्राणों की रक्षा हुई। वह सोचने लगी-''ये सब विधर्मी दया के पात्रा नहीं-मेरे पिता का वध करनेवाले आततायी !'' घृणा से उसका मन विरक्त हो गया।

स्वस्थ होकर मुगल ने कहा-''माता ! तो फिर मैं चला जाऊँ ?''

स्त्री विचार कर रही थी ''मैं ब्राह्मणी हूँ, मुझे तो अपने धर्म-अतिथिदेव की उपासना-का पालन करना

चाहिए। परन्तु यहाँ...नहीं - नहीं, ये सब विधर्मी दया के पात्र नहीं। परन्तु यह दया तो नहीं...कर्त्तव्य करना है। तब ?''

मुगल अपनी तलवार टेककर उठ खड़ा हुआ। ममता ने कहा-''क्या आश्चर्य है कि तुम भी छल करो ठहरो।''

''छल ! नहीं, तब नहीं-स्त्री ! जाता हूँ, तैमूर का वंशधर स्त्री से छल करेगा ? जाता हूँ। भाग्य का खेल है।''

ममता ने मन में कहा-''यहाँ कौन दुर्ग है ! यही झोपड़ी न; जो चाहे ले यले, मु ये तो अपना कर्त्तव्य करना पड़ेगा।'' वह बाहर चली आई और मुगल से बोली- ''जाओ भीतर, थके हुए भयभीत पथिक ! तुम चाहे कोई हो, मैं तुम्हें आश्रय देती हूँ। मैं ब्राह्मण कुमारी हूँ; सब अपना धर्म छोड़ दें, तो मैं भी क्यों छोड़ दूँ ?'' मुगल ने चन्द्रमा के मंद प्रकाश में वह महिमामय मुखमंडल देखा, उसने मन यही यमन नमस्कार किया। ममता पास की टूटी हुई दीवारों में चली गई। भीतर, थके पथिक ने झोपड़ी में विश्राम किया।

प्रभात में खंडहर की संधि से ममता ने देखा, सैकड़ों



अश्वारोही उस प्रांत में घूम रहे हैं। वह अपनी मूर्खता पर अपने को कोसने लगी।

अब उस यांेपड़ी से निकलकर उस पथिक ने कहा- “मिरजा ! मैं यहाँ हूँ।”

शब्द सुनते ही प्रसन्नता की चीत्कार ध्वनि से वह प्रान्त गूँज उठा। ममता अधिक भयभीत हुई। पथिक ने कहा-“वह स्त्री कहाँ है ? उसे खोज निकालो।” ममता छिपने के लिए अधिक चेष्ट हुई। वह मृग यदाव में चली गई। दिन यभर उसमें से न निकली। संध्या में जब उन लोगों के जाने का उपक्रम हुआ, तो ममता ने सुना, पथिक घोड़े पर सवार होते हुए कह रहा है- “मिरजा ! उस स्त्री को मैं कुछ दे न सका। उसका घर बनवा देना, क्योंकि मैंने विपत्ति में यहाँ विश्राम पाया था। यह स्थान भूलना मत।”-इसके बाद वे चले गए।

चैसा के मुगल यपठान युद्ध को बहुत दिन बीत गए। ममता अब सत्तर वर्ष की वृद्धा है। वह अपनी झोपड़ी में एक दिन पड़ी थी। शीतकाल का प्रभात था। उसका जीर्ण कंकाल खाँसी से गूँज रहा था। ममता की सेवा के लिए गाँव की दो यतीन स्त्रियाँ उसे घेर कर बैठी थीं; क्योंकि वह आजीवन सबके सुख यदुख की समभागिनी रही।

ममता ने जल पीना चाहा, एक स्त्री ने सीपी से जल पिलाया। सहसा एक अश्वारोही उसी झोपड़ी के द्वार पर दिखाई पड़ा। वह अपनी धुन में कहने लगा- ‘‘मिरजा ने जो चित्र बनवाकर दिया है, वह तो इसी जगह का होना चाहिए। वह बुढ़िया मर गई होगी, अब किससे पूछूँ कि एक दिन शाहंशाह हुमायूँ किस छप्पर के नीचे बैठे थे ? यह घटना भी तो सैंतालीस वर्ष के ऊपर की हुई !’’

ममता ने अपने विकल कानों से सुना। उसने पास की स्त्री से कहा-‘‘उसे बुलाओ।’’

अश्वारोही पास आया। ममता ने रुक रुककर कहा-‘‘मैं नहीं जानती कि वह शहंशाह था, या साधारण मुगल पर एक दिन इसी झोपड़ी के नीचे वह रहा। मैंने सुना था कि वह मेरा घर बनवाने की आज्ञा दे चुका था ! भगवान ने सुन लिया, मैं आज इसे छोड़े जाती हूँ। अब तुम इसका मकान बनाओ या महल, मैं अपने चिर विश्राम गृह में जाती हूँ !’’

वह अश्वारोही अवाक् खड़ा था। बुढ़िया के प्राण पक्षी अनन्त में उड़ गए।

वहाँ एक अष्टकोण मन्दिर बना और उस पर शिलालेख लगाया गया-

‘‘सातों देश के नरेश हुमायूँ ने एक दिन यहाँ विश्राम किया था। उनके पुत्रा अकबर ने उनकी स्मृति में यह गगनचुम्बी मन्दिर बनाया।’’

पर उसमें ममता का कहीं नाम नहीं।

विराम यचिह्न

देव मन्दिर के सिंहद्वार से कुछ दूर हटकर वह छोटी यसी दुकान थी। सुपारी के घने कुंज के नीचे एक मैले कपड़े के टुकड़े पर सूखी हुई धार में तीन यचार केले, चार कच्चे पपीते, दो हरे नारियल और छह अंडे थे। मन्दिर से दर्शन करके लौटते हुए भक्त लोग दोनों पट्टी में सजी हुई हरी भरी दुकानों को देखकर उसकी ओर ध्यान देने की आवश्यकता ही नहीं समझते थे।

अर्द्धनग्न वृद्धा दुकानवाली भी किसी को अपनी वस्तु लेने के लिए नहीं बुलाती थी। वह चुपचाप अपने केलों और पपीतों को देख लेती। मध्याह्न बीत चला। उसकी कोई वस्तु न बिकी। मुँह की ही नहीं, उसके शरीर पर की भी युर्रियाँ रूखी होकर ऐंठी जा रही थीं। मूल्य देकर भात यदाल की हाँ़डियाँ लिए लोग चले जा रहे थे। मन्दिर में भगवान के विश्राम का समय हो गया था। उन हाँ़डियों को देखकर उसकी भूखी आँखों में लालच की चमक बढ़ी, किन्तु पैसे कहाँ थे ? आज तीसरा दिन था, उसे दो एक केले खाकर बिताते हुए। उसने एक बार भूख से भगवान की भेंट कराकर क्षणभर के लिए विश्राम पाया; किन्तु भूख की वह पतली लहर अभी दबाने पर पूरी तरह समर्थ न हो सकी थी, कि राधे आकर उसे गुरेरने लगा। उसने भरपेट ताड़ी पी ली थी। आँखें लाल, मुँह से बात करने में याग निकल रहा था। हाथ नचाकर वह कहने लगा-

‘‘सब लोग जाकर खा पीकर सो रहे हैं। तू यहाँ बैठी हुई देवता का दर्शन कर रही है। अच्छा, तो आज भी कुछ खाने को नहीं ?’’

‘‘बेटा एक पैसे का भी नहीं बिका, क्या करूँ ? अरे, तो भी तू कितनी ताड़ी पी आया है।’’

‘‘वह सामने तेरे ठाकुर दिखाई पड़ रहे हैं। तू भी पीकर देख न !’’

उस समय सिंहद्वार के सामने की विस्तृत भूमि निर्जन हो रही थी। केवल जलती हुई धूप उस पर किलोल कर रही थी। बाजार बंद था। राधे ने देखा, दो यचार कौए काँव काँव करते हुए सामने नारियल कुंज की हरियाली में घुस रहे थे। उसे अपना ताड़ीखाना



स्मरण हो आया। उसने अंडों को बटोर लिया।

बुढ़िया 'हाँ, हाँ' करती ही रह गई, वह चला गया। दुकानवाली ने अँगूठे से दोनांे आँखों का कीचड़ साफ किया, और फिर मिट्टी के पात्र से जल लेकर मुँह धोया।

बहुत सोच यविचार कर अधिक उतरा हुआ एक केला उसने छीलकर अपनी अंजलि में रख उसे मन्दिर की ओर नैवेद्य लगाने के लिए बढ़कर आँख बंद कर लीं। भगवान ने उस अछूत का नैवेद्य ग्रहण किया या नहीं, कौन जाने; किन्तु बुढ़िया ने उसे प्रसाद सम यकर ही ग्रहण किया।

अपनी दुकान झोली में समेटे हुए, जिस कुंज में कौए घुसे थे, उसी मंे वह आ घुसी। पुआल से छाई हुई टट्टरों की झोपड़ी में विश्राम लिया।

उसकी स्थावर संपत्ति में वही नारियल का कुंज, चार पेड़ पपीते और छोटी यसी पोखरी के किनारे पर के कुछ केले के वृक्ष थे। उसकी पोखरी में एक छोटा युंड यसा बत्तखों का भी था, जो अंडे देकर बुढ़िया की आय में वृद्धि करता। राधे अत्यंत मद्यप था। उसकी स्त्री ने उसे बहुत दिन हुए छोड़ दिया था।

बुढ़िया को भगवान का भरोसा था, उसी देव मन्दिर के भगवान का, जिसमें वह कभी नहीं जाने पाई थी !

अभी वह विश्राम की झपकी ही लेती थी कि महंत जी के जमादार कुंज ने कड़े स्वर में पुकारा-"राधे, अरे रधवा, बोलता क्यांे नहीं रे !"

बुढ़िया ने आकर हाथ जोड़ते हुए कहा "क्या है महाराज ?"

"सुना है कि कल तेरा लड़का कुछ अछूतों के साथ मंदिर में घुसकर दर्शन करने जाएगा ?''

"नहीं, नहीं, कौन कहता है महाराज ! वह शराबी, भला मन्दिर में उसे कब से भक्ति हुई है ?"

"नहीं, मैं तुमसे कहे देता हूँ, अपनी खोपड़ी सँभालकर रखने के लिए उसे समझा देना। नहीं तो तेरी और उसकी दोनों की दुर्दशा हो जाएगी।"

राधे ने पीछे से आते हुए क्रूर स्वर में कहा "जाऊँगा, तब तेरे बाप के भगवान हैं ! तू होता कौन है रे !"

"अरे, चुप रे राधे ! ऐसा भी कोई कहता है रे। अरे, तू जाएगा, मन्दिर में। भगवान का कोप कैसे रोकेगा, रे ?" बुढ़िया गिड़गिड़ाकर कहने लगी। कुंजबिहारी जमादार ने राधे की लाठी देखते ही यीली बोल दी। उसने कहा-"जाना राधे कल, देखा जाएगा।"- जमादार धीरे धीरे खिसकने लगा।

"अकेले अकेले बैठकर भोग प्रसाद खाते यखाते बच्चू लोगों को चरबी चढ़ गई है। दरशन नहीं रे-तेरा भात छीनकर खाऊँगा। देखूँगा, कौन रोकता है।"-राधे गुर्राने लगा। कुंज तो चला गया, बुढ़िया ने कहा-"राधे बेटा, आज तक तूने कौन से अच्छे काम किए हैं, जिनके बल पर मन्दिर में जाने का साहस करता है ? ना बेटा, यह काम कभी मत करना। अरे, ऐसा भी कोई करता है।"

"तूने भात बनाया है आज ?"

"नहीं बेटा ! आज तीन दिन से पैसे नहीं मिले।

चावल हैं नहीं।"

"इन मंदिरवालों ने अपनी जूठन भी तुझे दी?"

"मैं क्यों लेती, उन्होंने दी भी नहीं।"

"तब भी तू कहती है कि मंदिर में हम लोग न जाएँ ! जाएँगे; सब अछूत जाएँगे।"

"न बेटा, किसी ने तु यको बहका दिया है। भगवान के पवित्र मन्दिर में हम लोग आज तक कभी नहीं गए। वहाँ जाने के लिए तपस्या करनी चाहिए।"

"हम लोग तो जाएँगे।"

“ना ऐसा कभी न होगा।”

“होगा, फिर होगा। जाता हूँ ताड़ीखाने, वहीं पर सबकी राय से कल क्या होगा, यह देखना।”-राधे ऐंठता हुआ चला गया। बुढ़िया एकटक मन्दिर की ओर विचारने लगी

...भगवान क्या होनेवाला है !”

दूसरे दिन मन्दिर के द्वार पर भारी जमघट था। आस्तिक भक्तों का युंड अपवित्रता से भगवान की रक्षा करने के लिए - होकर खड़ा था। उधर सैकड़ों अछूतों के साथ राधे मन्दिर में प्रवेश करने के लिए तत्पर था।

लट्ठ चले, सिर फूटे। राधे आगे ब य़ ही रहा था। कुंजबिहारी ने बगल से घूमकर राधे के सिर पर करारी चोट दी। वह लहू से लथपथ वहीं लोटने लगा। प्रवेशार्थी भागे। उनका सरदार गिर गया था। पुलिस भी पहुँच गई थी। राधे के अंतरंग मित्र गिनती में 10 -12 थे। वे ही रह गए।

क्षण भर के लिए वहाँ शिथिलता छा गई थी। सहसा बुढ़िया भीड़ चीरकर वहीं पहुँच गई। उसने राधे को रक्त में सना हुआ देखा। उसकी आँखें लहू से भर गईं। उसने कहा “राधे की लोथ मन्दिर में जाएगी।” वह अपने निर्बल हाथों से राधे को उठाने लगी।

उसके साथी बढे । मन्दिर का दल भी हुंकार करने लगा किन्तु बुढ़िया की आँखों के सामने ठहरने का किसी को साहस न रहा। वह आगे बढ़ी पर सिंहद्वार की देहलीज पर सहसा रुक गई। उसकी आँखों की पुतली में जो मूर्ति भंजक छाया यचित्र था, वहीं गलकर बहने लगा।

राधे का शव देहली के समीप रख दिया गया। बुढ़िया ने देहली पर सिर युकाया पर वह सिर उठा न सकी। मन्दिर में घुसनेवाले अछूतों के आगे बुढ़िया विराम चिह्न-सी पड़ी थी।

